(League of Nations)

Paper: CC-6 : HISTORY OF EUROPE AND MODERN WORLD

प्रथम विश्व युद्ध के समय सभी यह तीव्रता से अनुभव करने लगे थे कि इन युद्धों का अंत व शांति की स्थापना हो। सितंबर 1915 में ब्रिटिश विदेश मंत्री सर एडवर्ड ग्रे ने अमेरिकन राष्ट्रपति विल्सन के व्यक्तिगत सहायक कर्नल हाउस को लिखा था कि ऐसा संघ बनाया जाना चाहिए, जो संधि भंग करने वाले और युद्ध के नियम तोड़ने वाले राष्ट्र का नियंत्रण कर सके। संपूर्ण विश्व में शांति व सुरक्षा की स्थापना के लिए 1916 में राष्ट्रपति विल्सन ने अपना संघ बनाने का विचार प्रस्तुत किया तथा प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति पर राष्ट्र संघ की स्थापना के लिए भरसक प्रयत्न किए। यहां तक कि उन्होंने इसे बनाने का सहयोग प्रदान करने के लिए ग्रेट ब्रिटेन जापान और फ्रांस की राष्ट्रीयता एवं आत्म निर्णय के सिद्धांत का विरोध करने वाली कई मांगे स्वीकार की। इसीलिए विल्सन को राष्ट्र संघ का धर्म पिता कहा जाता है।

विल्सन ने 8 फरवरी 1918 को एक 14 सूत्री कार्यक्रम विश्व के सामने प्रस्तुत किया, जिसके आधार पर एक अंतरराष्ट्रीय संगठन के निर्माण पर जोर दिया गया। उन्होंने कहा कि 'छोटे और बड़े दोनोंही प्रकार के राज्यों को राजनीतिक स्वतंत्रता और प्रादेशिक अखंडता की पारस्परिक प्रत्याभूतियां (guarantee) समान रूप से प्राप्त हो सके, इस प्रयोजन की पूर्ति के लिए कुछ विशिष्ट समझौतों के अंतर्गत राष्ट्रों के एक सामान्य संगठन का निर्माण किया जाना चाहिए।' इस प्रकार राष्ट्र संघ एक सर्व प्रथम अंतर्राष्ट्रीय संगठन था, जो प्रथम विश्व युद्ध से उत्पन्न परिस्थितियों की उपज थी और उसका उद्देश्य स्थायी विश्व शांति की स्थापना करना था।

1 सितंबर 1918 को राष्ट्रपति विल्सन ने यह स्पष्ट घोषणा किया कि राष्ट्र संघ का विधान शांति समझौते का ही एक अंग होना चाहिए। पेरिस की शांति सम्मेलन में राष्ट्रसंघ के संविधान को तैयार करने केलिए विल्सन की अध्यक्षता में 19 सदस्यों की एक आयोग की स्थापना की गई। उस आयोग में छोटे राष्ट्रोंको भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिला। उक्त आयोग द्वारा 14 फरवरी 1919 को एक प्रस्ताव सम्मेलन के समक्ष प्रस्तुत किया गया, जिसे 28 अप्रैल 1919 को कुछ संशोधनों के साथ स्वीकृत कर दिया गया। शांति संधियों की प्रथम 26 धाराओं में राष्ट्रसंघ से संबंधित व्यवस्थाओं का ही वर्णन किया गया है।

राष्ट्र संघ के उद्देश्य

(1) अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की स्थापना करना अर्थात न्याय और सम्मान के आधार पर अंतरराष्ट्रीय संबंधों की स्थापना करके आने वाले युद्ध को रोकना।
(2) विश्व की राष्ट्रों के मध्य भौतिक तथा मानसिक सहयोग को प्रोत्साहन देना, जिससे मानव जीवन सुखी हो सके।
(3) पेरिस शांति संधि को क्रियाशील कराना।

राष्ट्र संघ का स्वरूप

राष्ट्र संघ का विधान या समझौता (covenant) संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर से बहुत छोटा केवल 4000 शब्दों का था। इसमें एक भूमिका तथा 1 से 10 पैराग्राफ वाली 26 धाराएं थी। भूमिका में इसके उद्देश्यों की घोषणा करते हुए यह कहा गया कि इसके मुख्य लक्ष्य अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ाना तथा अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को स्थपित करना है। इसकी प्रथम 7 धाराओं में इसकी सदस्यता के नियमों और संघ के विभिन्न अंगो का वर्णन है। 8 वीं तथा 9 वीं धारा में निशस्त्रीकरण का वर्णन है। 10 वीं से 17 वीं धारा तक विभिन्न झगड़ों के शांतिपूर्वक निर्णय, आक्रमणों को रोकने तथा सामूहिक सुरक्षा बनाए रखने के उपायोंका प्रतिपादन है। 18 से 21 धाराओं में संधियों की रजिस्ट्री, प्रकाशन, संशोधन और वैधता का उल्लेख है। धारा 21 में मुनरोसिद्धांत की स्वीकृति तथा धारा 22 में शासनादेश की पद्धति का प्रतिपादन है। धारा 23 में संघ के सदस्यों द्वारा श्रमिक कल्याण, बाल कल्याण, नारी व्यापार निषेध, रोगों के नियंत्रण अदि के संबंध में किए जाने वाले कार्यों पर बल दिया गया है। धारा 24 में विभिन्न अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के राष्ट्र संघ के साथ संबंधों का वर्णन है। धारा 25 में रेडक्रास पर बल दिया गया है और धारा 26 में राष्ट्रसंघ के समझौते में संशोधन करने की प्रक्रिया का उल्लेख है।

राष्ट्र संघ की सदस्यता

राष्ट्र संघ की स्थापना के प्रारंभ में 52 राष्ट्र सदस्य थे, किंतु बाद में इनकी संख्या 57 हो गई। इसमें तीन प्रकार के सदस्य थे – प्रथम इसके मौलिक सदस्य राष्ट्र थे, जिनकी संख्या 32 थी। द्वितीय आमंत्रित राष्ट्र जिनकी संख्या 13 थी। तृतीय, समझौता पत्र लागू होने के बाद बनाए गए सदस्य राष्ट्र। 1 अप्रैल 1920 तक राष्ट्र संघ के 42 सदस्य राष्ट्र थे और 21 राष्ट्र बाद में इसमें सम्मिलित हुए।

राष्ट्र संघ के संविधान में यह व्यवस्था की गई थी, कि यदि कोई देश अंतरराष्ट्रीय दायित्व को स्वीकार करने, सैनिक शक्ति और शस्त्रों के संबंध में राष्ट्र संघ द्वारा निर्धारित नियमों का पालन करने पर अपनी सहमति प्रकट करें तथा राष्ट्र संघ की सभा के सदस्य दो तिहाई मतों से उसे सदस्य बनाने के लिए अपनी सहमति प्रकट करें, तो उसे राष्ट्र संघ का सदस्य बनाया जा सकेगा। किसी भी सदस्य राष्ट्र को परिषद की सर्वसम्मति से अलग किया जा सकता था।

शान्ति-संस्थापक के रूप में राष्ट्रसंघ:

अपने जीवन के प्रारम्भ से ही राष्ट्रसंघ ने शन्ति-संस्थापक के रूप में काम करना शुरू किया । उसके समक्ष अनेक अंतरराष्ट्रीय विवाद आये और कुछ अंशों में उनको सुलझाने में वह सफल भी रहा । छोटे-छोटे राज्यों के झगड़ो को हल करने में राष्ट्रसंघ को पर्याप्त सफलता मिली । 1922 ई० में आलैण्ड केटापुओं पर अधिकार करने के सम्बन्ध में स्वीडन और फिनलैण्ड में झगड़ा उपस्थित हुआ । राष्ट्रसंघ ने ये द्वीप फिनलैण्ड को दिलवा दिए । एक अंतरराष्ट्रीय संधि के द्वारा इन द्वीपों को तटस्थ घोषित कर दिया गया । इसी तरह 1921 ई० में यूनान तथा युगोस्लाविया के बीच अल्बेनिया की सीमा के विषय में झगड़ा आरम्भ हुआ, परन्तु राष्ट्रसंघ ने शन्तिपूर्ण ढंग से झगड़े का निबटारा करा दिया । 1923 ई० में लेटेशिया नगर के सम्बन्ध में झगड़ा प्रारम्भ हुआ । 1922 ई० में इस नगर पर से पेरू का अधिकार समाप्त करके कोलम्बिया को अधिकार कायम कराया गया था । परख 1923 ई० में पेरू ने लेटेशिया पर अधिकार करने के लिए अपनी सेनाएँ भेज दीं।

राष्ट्रसंघ ने मध्यस्थता करके लेटेशिया पुन: कोलम्बिया को दिलवा दिया । 1923 ई० में पोलैण्ड और चेकोस्लोवाकिया में सीमा-सम्बन्धी झगड़ा प्रारम्भ हुआ, जिसे शन्तिपूर्ण ढंग से सुलझाने में संघ सफल रहा । 1923 ई० में हंगरी तथा रूमानिया के मध्य सीमा-सम्बन्धी झगड़ो का निपटारा भी राष्ट्रसंघ ने सफलतापूर्वक किया । 1925 ई० में सीमा-सम्बन्धी विवाद के कारण यूनान ने बुलगेरिया पर आक्रमण कर दिया ।

राष्ट्रसंघ ने यूनान को आर्थिक बहिष्कार की धमकी दी, जिससे भयभीत होकर यूनान ने युद्ध बंद कर दिया तथा अपनी सेनाओं को वापस बुला लिया । इन उपलब्धियों से राष्ट्रसंघ की प्रतिष्ठा में भारी वृद्धि हुई । 1922 से 1930 ई० की अवधि में राष्ट्रसंघ अपनी उन्नति के चरम शिखर पर रहा लेकिन, उसके तुरंत बाद उसके पतन की क्रिया प्रारम्भ हो गयी शस्त्रास्त्रों की होड़ को नियन्त्रित करने के लिए राष्ट्रसंघ ने अनेकानेक प्रयास किये, लेकिन इस क्षेत्र में उसे लेशमात्र भी सफलता नहीं मिली । कोई भी बड़ा राज्य इस मामले में सहयोग करने को तैयार नहीं था और जब जेनेवा में निरस्त्रीकरण सम्मेलन समाप्त हुआ तो पुन: राष्ट्रों के बीच शस्त्रीकरण की घोर प्रतियोगिता चल पड़ी जिसने अंतरराष्ट्रीय वातावरण को दूषित करके द्वितीय विश्वयुद्ध के मार्ग को प्रशस्त किया ।

राष्ट्रसंघ की असफलताएँ (Failures of League of Nations):

राजनीतिक विवादों में भी जब बड़े राष्ट्रों के स्वार्थ परस्पर टकराने लगे तब उन्हें रोकने में संघ सर्वथा असफल रहा । यदि राष्ट्रसंघ बड़े देशों के मामलो को भी छोटे देशों के मामलो के समान हल करने में सफल हो जाता तो अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा की समस्या हमेशा के लिए हल हो जाती परन्तु, जब किसी बड़े राज्य का मामला उसके समुख उपस्थित हुआ तो राष्ट्रसंघ ने स्वयं को असहाय महसूस किया शुरू में विलानगर को लेकर पोलैण्ड और लियुएनिया के बीच झगड़ा शुरू हुआ । 1920 ई० में पोलैण्ड ने उसे बलपूर्वक छीन लिया लिथुएनिया के राष्ट्रसंघ को अपील करने पर दो वर्ष तक बराबर इसके समाधान का प्रयत्न

किया जाता रहा, परन्तु पोलैण्ड को फ्रांस और बड़े देशोंका समर्थन प्राप्त था तथा उसका कुछ भी न बिगाड़ा जा सका । इस प्रकार, इस कार्य में राष्ट्रसंघ एकदम असफल रहा ।

1923 ई० में इटली तथा यूनान में अल्बानिया की सीमा के सम्बन्ध में झगड़ा हो गया । यूनानी आतंकवादियों ने सीमा निश्चित करनेवाले कमीशन के इतालवी अधिकारियों की हत्या कर दी । इस पर इटली ने यूनान से क्षतिपूर्ति की माँग की, परन्तु यूनान इसके लिए तैयार नहीं हुआ । यद्यपि यह मामला राष्ट्रसंघ के सुपुर्द कर दिया गया था, परन्तु इटली की सरकार ने यूनान के कीर्फ्यू नगर पर बम वर्षा करके उसे नष्ट कर डाला तथा यूनान को क्षतिपूर्ति करने के लिए बाध्य किया । यूनान द्वारा राष्ट्रसंघ में अपील किये जाने पर राइसघ इटली को दंड देने में असमर्थ रहा तथा उसकी निर्बलता स्पष्ट हो गयी ।

1931 ई० में राष्ट्रसंघ के पतन का सिलसिला प्रारम्भ हुआ । इस वर्ष राष्ट्रसंघ के एक सदस्य जापान ने एक दूसरे सदस्य चीन पर आक्रमण करके उसके एक प्रदेश मंचूरिया पर अपना अधिकार कायम कर लिया चीन ने आक्रमण के विरुद्ध राष्ट्रसंघ में शिकायत की और सामूहिक सुरक्षा के सिद्धान्त की दुहाई देते हुए जापान के विरुद्ध कठोरतम कार्यवाही करने की माँग की राष्ट्रसंघ में इस प्रश्न पर कईदिनों तक वाद-विवाद होता रहा, लेकिन जापान ने निन्दा की परवाह किये बिना अपना आक्रमण जारी रखा तथा मंचूरिया के एक विशाल भूभाग पर अधिकार करके मंचूकाओ नामक एक स्वतंत्र राज्य का निर्माण कर दिया, जो पूर्णतया जापान के प्रभाव में था ।

1930 ई० तक राष्ट्रसंघ को कई राजनैतिक झगड़ों को सुलझाने में सफलतमिली थी, क्योंकि इन झगड़ों का संबंध छोटे-छोटे राज्यों से था इस बार एक महान और शक्तिशाली राज्य ने आक्रमण का सिलसिला शुरू किया था और राष्ट्रसंघ के लिए यह कठिन परीक्षा का समय था । लेकिन, राष्ट्रसंघ को इस मामले में अपने प्रमुख सदस्यराज्यों का सहयोग नहीं मिल सका ।

जापान कहा करता था कि मंचूरिया पर आधिपत्य जमाने का उसका मुख्य उद्देश्य रूस की साम्यवादी व्यवस्था को समाप्त करना था । इस कारण, ब्रिटेन और फ्रांस जैसे पूँजीवादी-साम्राज्यवादी राज्य उसकी हरकतों को अनदेखा करने के पक्ष में थे । अत उन्होंने जापान की आक्रामक कार्यवाही के प्रति उदासीन रवैया अपनाया और राष्ट्रसंघ निष्क्रिय बना रहा ।जापान अपने इच्छानुसार चीन की भूमि को रोदता रहा और राष्ट्रसंघ एक मूकदर्शक की तरह देखता रहा । 1933 ई० में जापान ने राष्ट्रसंघ की सदस्यता का भी परित्याग कर दिया । 1937 ई० में जापान ने पुन: चीन पर आक्रमण किया और राष्ट्रसंघ उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सका । सामूहिक सुरक्षा के सिद्धान्त की यह बहुत बड़ी पराजय थी ।

जब एक बार किसी आक्रामक प्रवृति को छूट मिल जाती है तो दूसरे आक्रामक राष्ट्रों का हौसला और उत्साह बहुत बढ़ जाता हे । 1935 ई० में ऐसी ही बात हुई जब राष्ट्रसंघ के एक सदस्य राज्य इटली ने दूसरे सदस्य-राज्य अबीसीनिया पर आक्रमण कर दिया । चीन की तरह अबीसीनिया भी शिकायत लेकर राष्ट्रसंघ पहुँचा और सामूहिक सुरक्षा की दुहाई देते हुए रक्षा की माँग की लेकिन, इस बार भी आक्रामक राष्ट्र एक महान राज्य था और ब्रिटेन तथा फ्रांस इटली के तानाशाह मुसोलिनी को अप्रसन्न करना नहीं चाहते थे । अत अबीसीनिया को उसके भाग्य पर छोड़ दिया गया और अबीसीनिया पर इटली का आक्रमण जारी रहा ।

इसी बीच इंग्लैण्ड और फ्रांस का जनमत बहुत खिन्न हो उठा और जनता ने अपनी सरकारों पर दबाव डाला कि मुसोलिनी की आक्रामक कार्यवाही के विरुद्ध वे राष्ट्रसंघ का भरपूर समर्थन करें ।स्थिति ऐसी हो गयी कि खुले तौर परब्रिटेन और फ्रांस की सरकारों के लिए इस लोकमत की अवहेलना करना संभव नहीं था । अत: ब्रिटेन और फ्रांस के सहयोग से राष्ट्रसंघ ने इटली के विरुद्ध आर्थिक प्रतिबन्ध लगा दिया । उधर चुपके से फ्रांस औरब्रिटेन के प्रधान मन्त्रियों ने एक गुप्त समझौता (होर-लावाल समझौता) कर लिया, जिसके द्वारा यह निश्चित किया गया कि इटली के विरुद्ध आर्थिक प्रतिबन्ध को कारगर नहीं होने दिया जाए ।यह ध्वंसन (सैबोटाज) सफल रहा । राष्ट्रसंघ के आर्थिक प्रतिबन्ध के बावजूद अबीसीनिया पर इटालवी आक्रमण जारी रहा और वह इटालवी साम्राज्य में मिला लिया गया । इस प्रकार, राष्ट्रसंघ के एक सदस्यराज्य का अस्तित्व ही मिट गया । इटली की विजय का राष्ट्रसंघ के जीवन पर घातक प्रभाव पड़ा और इसके फलस्वरूप राष्ट्रसंघ की प्रतिष्ठा धूल में मिल गयी । छोटे-छोटे निर्बल राष्ट्रों का-जो राष्ट्रसंघ की सुरक्षा पद्धति और सामूहिक सुरक्षा के सिद्धान्त पर आश्रित थे-राष्ट्रसंघ पर से विश्वास उठ गया । वस्तुत: यह अबीसीनिया की स्वतन्त्रता की नहीं, वरन् राष्ट्रसंघ की हत्या थी ।

1935 ई० के पश्चात् घटित होनेवाली सभी घटनाओं से राष्ट्रसंघ की निर्बलता पूर्णत: प्रगट हो गयी । जापान ने 1937 ई० में चीन पर आक्रमण कर दिया, परन्तु राष्ट्रसंघ जापान के विरुद्ध कोई कार्य करने में असमर्थ रहा । इसी प्रकार, 1937 ई०

में स्पेन में गृहयुद्ध छिड़ गया तथा जनरल फ्रैंको ने स्पेन के गणतन्त्र के विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया । हिटलर और मुसोलिनी ने खुले आम फ्रैंको की सहायता की तथा स्पेन में तानाशाही कायम हो गयी । इस दौरान में राष्ट्रसंघ ने अहस्तक्षेप की नीति का अनुसरण किया, जो अत्यन्त अन्यायपूर्ण थी । राष्ट्रसंघ स्पेन के गणतन्त्र की रक्षा करने में असमर्थ रहा ।

इसी बीच 1933 ई० में जर्मनी में हिटलर का उत्कर्ष हुआ और उसने शुरू से ही अपनी आक्रामक कार्यवाहियाँ शुरू कर दीं। उसने एक-एक करके वर्साय-सन्धि की शर्तों को तोड़ना शुरू किया और राष्ट्रसंघ उसके अनुचित कार्यों को रोकने में सर्वथा असमर्थ रहा । सर्वप्रथम 1933 ई० में हिटलर ने बिना विधिवत् सूचित किये ही राष्ट्रसंघ की सदस्यता का परित्याग कर दिया और जेनेवा के निरस्त्रीकरण सम्मेलन में भाग लेना बंद कर दिया ।

इस कार्यवाही से निरस्त्रीकरण की सारी योजना खटाई में पड़ गयी । फिर, उसने जर्मनी में सैनिक सेवा अनिवार्य कर दी । सभी समझौतों को भंग करते हुए उसने राइनलैण्ड में फौज भेजकर उस पर अधिकार कर लिया । 1938 ई० में उसने बलप्रयोग करके आस्ट्रिया को जर्मन साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया । इसके तुरंत बाद ही उसने चेकोस्लोवाकिया स्थित सुडेटेन जर्मन अल्पसंख्यकों का प्रश्न उठाया और एक घोर अंतरराष्ट्रीय संकट उत्पन्न कर दिया । धौंस दिखाकर उसने ब्रिटेन और फ्रांस को मजबूर कर दिया कि सुडेटेनलैण्ड को जर्मनी को दिये जाने की बातें मान लें ।

कुछ ही दिनों में शेष चेकोस्लोवाकिया भी हिटलर की आक्रामक कार्यवाही का शिकार हो गया और यूरोप के ओझल हो गया । इस संकट के समय राष्ट्रसंघ राष्ट्रसंघ का गला अत्यन्त असम्मानपूर्वक घोंटा गया । सितम्बर, 1938 में चेकोस्लोवाकिया की छुट्टी करने के बादहिटलर ने पोलैण्ड और डान्सिंग पर ध्यान दिया जो शीघ्र ही उसके आक्रमणों का शिकार होने वाले थे । सितम्बर, 1939 को उसने पोलैण्ड को हड़पने के निमित्त उस पर आक्रमण शुरू कर दिया ।

जब स्थिति काबू से बाहर हो गयी तोब्रिटेन और फ्रांस की आँखें खुलीं और अब उन्हें एहसास हुआ कि राष्ट्रसंघ का समर्थन न करके उन्होंने कैसी गलती की थी । लेकिन, इस समय तक काफी विलम्ब हो चुका था । पोलैण्ड को जर्मन आक्रमण से बचाने के लिए इंग्लैण्ड और फ्रांस ने भी जर्मनी के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी और इस प्रकार द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारम्भ हो गया । सितम्बर, 1939 के इन तूफानीदिनों में राष्ट्रसंघ असहाय और प्राणहीन होकर पड़ा रहा ।

राष्ट्रसंघ की असफलता के कारण (Reasons for Failure of League of Nations):

इस प्रकार, अंतरराष्ट्रीय सहयोग का एक महान प्रयास अल्पकाल में ही असफल हो गया यह असफलता अनिवार्य थी । किसी भी संगठन की सफलता उसके सदस्योंके रवैये परनिर्भर करती है । लेकिन, राष्ट्रसंघ के प्रमुख सदस्योंने इसके सिद्धान्तों पर विश्वास नहीं किया ओर इस कारण यह असफल रहा । व्यावहारिक राजनीति में इसकी सफलता मुख्य रूप से बड़े राष्ट्रों के सहयोग पर निर्भर करती थी । लेकिन, राष्ट्रसंघ शुरू से ही इस सहयोग सेवंचित रहा । संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति के अनवरत प्रयासों के फलस्वरूप राष्ट्रसंघ की स्थापना हुई थी । लेकिन, बाद में वह स्वयं इसका सदस्य नहीं रहा ।

अमेरिकी सीनेट को यह सदस्यता मान्य नहीं थी और राष्ट्रपति विल्सन के प्रयासों के बावजूद अमेरिका संघ से अलग ही रहा । संयुक्त राज्य अमेरिका की अनुपस्थिति में आर्थिक प्रतिबन्ध लगाना या आक्रामक तानाशाहो को आक्रामक कार्यवाही से रोकना असम्भव हो गया ।

दूसरा महान राज्य सोवियत संघ राष्ट्रसंघ को शुरू से ही शंका कीनिगाहों से देखता रहा । सोवियत संघ को संघ की सदस्यता शुरू में नहींदी गयी थी और वह इसे पूँजीवादी राष्ट्रों का एक संगठन-मात्र मानता रहा । बाद में जब हिटलर के उत्कर्ष से यूरोपीय शान्ति पर खतरा पैदा हो गया तो सोवियत संघ राष्ट्रसंघ में शामिल हुआ लोकन, उस समय तक राष्ट्रसंघ एक व्यर्थ की संस्था बन गया था और कारगर ढंग से कार्यवाही करने की क्षमता उसमें नहींरह गयी थी ।

इसी तरह, जर्मनी से सहयोग की अपेक्षा करना भी व्यर्थ था । 1925 ई० में लोकार्नो समझौते के अनुसार जर्मनी को राष्ट्रसंघ की सदस्यता प्रदान की गयी थी । पर, जर्मनी कभी राष्ट्रसंघ का वफादार सदस्य नहीं हो सकता था, क्योंकि राष्ट्रसंघ उस धृणित वर्साय संधि का एक अभिन्न अंग था जिसको हिटलर मिटाने का उद्देश्य रखता था ।

एक दूसरा महान राज्य इटली अपने को मुसोलिनी की फासिस्टवादी विचारधारा के समक्ष समर्पित कर चुका था और इस विचारधारा को विश्वशान्ति के सिद्धान्त में कतई विश्वास नहीं था । मुसोलिनी मानव-सभ्यता की प्रगति के लिए युद्ध को आवश्यक मानता था । इस हालत में केवल ब्रिटेन और फ्रांस ही बच रहे थे, जिनके कंधे पर राष्ट्रसंघ का भविष्य निर्भर करता था ।

संघ के सदस्योंके बीच परस्पर सहयोग की भावना के अभाव का हिटलर ने अत्यधिक लाभ उठाया । यद्यपि फ्रांस राष्ट्रसंघ को यूरोपीय सुरक्षा का सबसे बड़ा साधन समझता था, परंतु जब कार्यवाही करने का अवसर आया तो उसने सबसे अधिक शिथिलता दिखायी । अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए उसने अनेक बार इटली का विरोध करने में संकोच प्रदर्शित किया । कोई भी देश सच्चे अर्थों में राष्ट्रसंघ के सिद्धान्तों में विश्वास नहीं करता था । ऐसी हालत में राष्ट्रसंघ के सफल होने की आशा करना ही बेकार था ।

पर, इस असफलता के बावजूद राष्ट्रसंघ के महत्त्व को कम नहीं किया जा सकता है । इसने अंतरराष्ट्रीय सहयोग और सौहार्द्र की एक नयी परम्परा का सूत्रपात किया, जो अंतरराष्ट्रीय जीवन का एक अभिन्न अंग बन गया । इसने गुप्त कूटनीति के दुर्गुणों को दूर कर अंतरराष्ट्रीय राजनीति को एक नया मार्ग दिखाया । इसके अतिरिक्त, इसने विश्व को एक बहुमूल्य अनुभव प्रदान किया । द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना इसी अनुभव और परीक्षण का परिणाम था ।

Deptt. Of History

(चेतावनी: प्रस्तुत आलेख का इस्तेमाल केवल पाठ्यक्रम की तैयारी के लिए करें । किसी भी माध्यम से इसकी पुनःप्रस्तुति, अग्रसारण तथा उल्लेख पूर्णतः प्रतिबंधित है ।)